पूज्य गुरुदेव पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य का संक्षिप्त जीवन विवरण
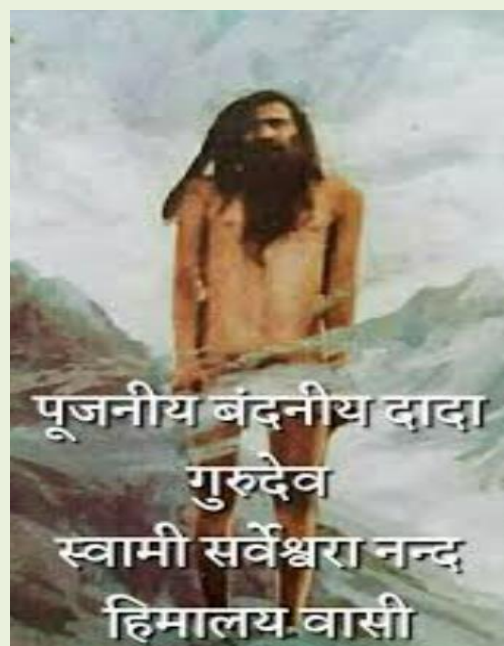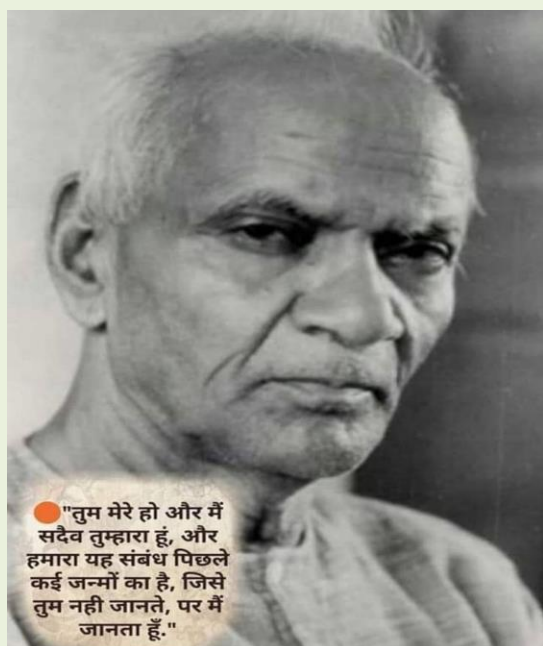
यह लघु पुस्तिका इस युग के व्यास परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य के जीवन-दर्शन को जन-जन तक पहुँचाने का एक छोटा सा प्रयास है। ऐसे दिव्य व्यक्तित्व को किसी शब्द सीमा में बांध पाना लगभग असम्भव ही है,फिर भी एक प्रयास किया गया है।

ऑनलाइन ज्ञानरथ गायत्री परिवार

सितम्बर 24, 2023

आज से 112 (2023) वर्ष पूर्व आगरा जनपद के आँवलखेड़ा ग्राम में जन्में, वेदमूर्ति तपोनिष्ठ की उपाधि प्राप्त, भारतीय संस्कृति के उन्नयन को समर्पित एवं सच्चे अर्थों में ब्राह्मणत्व को जीवन में उतारने वाला यह राष्ट्र-सन्त अपने 80 वर्ष के जीवन में (1911-1990) आठ सौ से अधिक वर्ष का कार्य कर गया।

सादगी की प्रतिमूर्ति, ममत्व, स्नेह से लबालब, अंतःकरण एवं समाज की हर पीड़ा जिनकी निज की पीड़ा थी, ऐसा जीवन जीने वाले युगदृष्टा ने जीवन भर जो लिखा,अपनी वाणी से कहा, औरों को प्रेरित करते हुए उनसे जो संपन्न करा लिया, उस सबको विषयानुसार शब्दों में बाँधना एक नितान्त असम्भव कार्य है। यदि यह सफल बन पड़ा है तो मात्र उस

गुरुसत्ता के आशीष से ही, जिनकी हर श्वाँस गायत्री यज्ञमय थी एवं समिधा की तरह जिन्होंने अपने को संस्कृति-यज्ञ में होम कर डाला।

उनकी जीवन अवधि के 80 वर्षों में से प्रारम्भिक 30 वर्ष जन्मस्थली आँवलखेड़ा ग्राम, आगरा जनपद में एक साधक, समाज-सुधारक, प्रखर स्वतंत्रता संग्राम सेनानी की तरह बीते । इसके बाद के 30 वर्ष मथुरा में एक विलक्षण कर्मयोगी, संगठन निर्माता, भविष्य दृष्टा, सारी मानव जाति को एक सूत्र में पिरोकर "युग निर्माण सत्संकल्प" के रूप में मिशन का मैनिफेस्टो "सतयुगी समाज का आधार" बताकर, प्रस्तुत करते दृष्टिगोचर होते हैं। इस पूरी अवधि में एवं आयु के अंतिम 20 वर्षों में परम वंदनीय माता जी का हर निमिष उनका साथ

रहा। अंतिम 20 वर्ष शांतिकुंज हरिद्वार या सूक्ष्म शरीर से हिमालय में बीते। ऋषि परम्परा का बीजारोपण, सिद्ध तीर्थ, गायत्री तीर्थ का निर्माण एवं वैज्ञानिक अध्यात्मवाद के लिए संकल्पित ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान एवं समर्थक साहित्य का लेखन इसी अवधि में हुआ। जीवन भर उन्होंने लिखा, हर विषय को स्पर्श किया एवं जीवन सम्बंधित भाव-संवेदना को अनुप्राणित करने वाली अपनी लेखनी द्वारा साधना की। स्वयं के बारे में गुरुदेव कहते थे :

"हम न तो अखबार नवीस हैं, न बुकसेलर, हम तो युगदृष्टा हैं। हमारे ये विचार क्रान्ति के बीज हैं। ये फैल गये तो सारी विश्व-वसुधा को हिलाकर रख देंगे।"

गद्य ही नहीं, पद्य पर भी उनकी उतनी ही पकड़ थी। हज़ारों को प्रेरित कर उन्होंने सृजनात्मक काव्य लिखवाया। उनकी लेखनी के माध्यम से करोड़ों व्यक्तियों का जीवन बदलता ही चला गया। उनकी ओजस्वी अमृतवाणी ने लाखों का कायाकल्प कर दिया। उनके उद्बोधनों को, जो उन्होंने भारत के कोने-कोने व मथुरा-हरिद्वार की पावन भूमि में दिए, इस छोटी सी पुस्तिका में देने का प्रयास किया है। करुणा छलकाती उनकी वाणी,अंतःकरण को स्पर्श करती हुई जीवन-शैली बदलने को प्रेरित करती रहती है।

जो कुछ भी इस पुस्तिका में दिया गया है, वह सब उसी गुरुसत्ता का है, उन्हीं का है, उन्हीं को समर्पित है।

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार चेतनात्मक धरातल पर सब के मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है। परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, 80 वर्ष का जीवन जीकर, एक विराट् ज्योति प्रज्वलित कर, उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है। परम वंदनीया माता जी शक्ति का रूप थीं

जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी मां शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही हैं। उन्होंने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया। आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं है,लेकिन नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानी गणों के वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे, किन्तु यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में, युग संजीवनी के रूप में देख सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये। इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबा कर लिखा गया हो। हर शब्द ऐसा जो हृदय छूता, मन को, विचारों को बदलता चला जाता है। लाखों करोड़ों के मनों के अंतःस्थल को छू कर उसने उनका कायाकल्प कर दिया। रूसो के प्रजातंत्र की, कार्ल मार्क्स के

साम्यवाद की क्रांति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है। उनके मात्र इस युगवाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ो के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं। अपनी वाणी के उद्बोधन से एक विराट गायत्री परिवार,अकेले अपने बलबूते पर खड़े रहते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाय, कैसे

उस महापुरुष के जीवनचरित को छन्दबद्ध लिपिबद्ध किया जाय।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् 1967 (20 सितम्बर 1911) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा, जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पंद्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्में, श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्यकाल ग्रामीण परिसर में बीता। वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता श्री पंडित रूपकिशोर शर्मा जी आसपास के, दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अतःकरण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था। साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा। जब वे

अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को आम के वृक्षों के बीच बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे। छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उन्होनें संबंधियों को बताया कि *"हिमालय ही उनका घर है" एवं वे वहीं जा रहे थे।* किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुतः अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी । जात-पात का कोई भेद नहीं। जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला की, जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवा कर

उन्होंने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया लेकिन अपना व्रत नहीं छोड़ा।

उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा:

"मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ।"

नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं पूरे विधान से कथा कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गांव उनके विरोध में बोल रहा था।

उन्होंने किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा थोड़ी सी ही पायी थी,उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है।

हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य- शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना,पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे- छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे कि जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति उसका स्वाभिमान जागे, इसलिए गांव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व

बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर (weaving house) स्थापित किया व युवकों को सिखाया कि उसके द्वारा हाथ से कपड़ा कैसे बुना जाय,अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् 1926 में उनके घर की पूजास्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का स्थान थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ । अदृश्य कायाधारी सूक्ष्म रूप में, उन्होंने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर, उन्हें उनके पिछले कई जन्मों में संपन्न क्रियाकलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवम उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषि सत्ताएँ

उनसे आशा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक वर्ष तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का निर्देश भी उनके गुरु ने दिया एवं उन्हें तीन निर्देश दिए-

1. गायत्री महाशक्ति के चौबीस - चौबीस लाख के चौबीस महापुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना।

2. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर "ज्ञानयज्ञ" अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के 1938 में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार क्रांति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा था

3.चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्वाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्त्वपूर्ण मोड़ था, जिसने भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया।

पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक "हमारी वसीयत और विरासत" में लिखते हैं कि प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। गुरुसत्ता द्वारा दो बातें विशेष रूप से कहीं गई

1.संसारी लोग क्या करते हैं, क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निधार्रित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना।

2.स्वयं को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना।

जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह करते हुए आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी।

गुरुदेव कहते हैं*,"वसंत पर्व का यह दिन, गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया।*

सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।”

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने तोड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख सुन कर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। 1927 से 1933 तक का समय एक सक्रिय स्वयं सेवक, स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के

विरोध के बावजूद पैदल लम्बा रास्ता पार करके वे आगारा के उस शिविर में पहुंचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था। अनेकानेक मित्रों, सखाओं,मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत होकर कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल भी गये। उन्हें कई बार छह-छह माह की जेल भी हुई। जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अंग्रेजी सीखकर लौटे। आसनसोल जेल में वे पंडित जवाहर लाल नेहरु की माता श्रीमती स्वरूप रानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई महामना मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था और वह मंत्र था: *"जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के*

लिए हर व्यक्ति के अंशदान से मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना ।"

यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान, बीस पैसा नित्य या एक माह में एक दिन की आय तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनता चला गया, जिसका आधार प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का समावेश करना था।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जनआक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रांतिकारी स्थिति की तरह उन्होंने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर

होता था। नमक आन्दोलन के दौरान वे निर्दय शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था, आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं । बाद में फिरंगी, सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये। जरारा आन्दोलन के दौरान गुरुदेव ने झण्डा छोड़ा नहीं, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा छीनने का प्रयास करते रहे,उन्होंने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये लेकिन झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तो सभी उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्यचकित रह गये। तब से ही गुरुदेव को आजादी के मतवाले

"श्रीराम मत" नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें "मत जी" नाम से ही जानते हैं।

लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उन्होंने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके प्रस्तुत आँकड़े तत्कालीन ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे गए। इसी आधार पर संयुक्त प्रान्त में लगान माफी के आदेश लागू हुए। गुरुदेव ने स्वतंत्रता की इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा। 50 वर्ष बाद सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर उन्हें ताम्रपत्र देकर शांतिकुज में सम्मानित किया। उसी सम्मान के साथ प्रदान की गई सारी सुविधाएं,पेंशन आदि उन्होंने प्रधानमंत्री राहत फण्ड, हरिजन फण्ड के नाम समर्पित कर दीं।

वैरागी जीवन का, सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

1935 के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरु हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे महर्षि अरविंद से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम अहमदाबाद गये। सांस्कृतिक एवम आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को परतंत्रता की बेड़ियों से कैसे मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया जब आगरा में "सैनिक समाचार पत्र" के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाबराय व पालीवाल जी से

सीख लेते हुए सत स्वाध्यायरत रह कर गुरुदेव ने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक 1938 की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया।

प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अतः पुनः सारी तैयारी के साथ विधिवत् 1940 जनवरी को अखण्ड ज्योति पत्रिका का शुभारंभ किया जिसकी पहले तो मात्र 250 कापियां ही निकाली गईं लेकिन गुरुदेव ने अपने परिश्रम को घर-घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने के लिए हृदयस्पर्शी पत्रों का सहारा लिया जिससे इस दिव्य पत्रिका की संख्या बढ़ते बढ़ते नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज कई लाख तक पहुंच गई है और कई करोड़ साधक इसको पड़ते हैं ।यह पत्रिका

आज 2023 में अनेकों भाषाओं में छप रही है एवम डिजिटल मीडिया में भी उपलब्ध है।

पत्रिका के साथ-साथ *"मैं क्या हूँ"* जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ, स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे । पुस्तकों का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंतःस्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही। साथ देने आ गयी परम वंदनीय माता जी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी थी। उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुःखी था,पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने

गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं। यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रांति में ऋषियुग्म के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित "गायत्रीचर्चा" स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरीज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं।

इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधिविधान के साथ 1953 में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, 108 कुण्डी यज्ञ व उनके

द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ। गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परम वंदनीया माता जी ने जिन्होंने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे गहने बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी। धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधनापीठ बन गयी। वहां पर 2400 तीर्थों के जल व रज की स्थापना की गयी, 2400 करोड़ गायत्री मंत्रलेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो आजतक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है।

1941 से 1971 तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय था।

1956 में नरमेध यज्ञ, 1957 में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनसे गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया। कार्तिक पूर्णिमा 1958 में आयोजित इस कार्यक्रम में 10 लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देश भर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की 10000 से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं। संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परम वंदनीय माताजी को सौंपते चले गये एवम् 1959 में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय में चले गये जहाँ उन्हें गुरुसत्ता

से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन-नंदनवन क्षेत्र में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्षग्रन्थों का भाष्य करना था। तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की रचना, गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब प्रायः 35 संस्करण छप चुके हैं।

हिमालय से लौटते ही उनमें महत्त्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रंथों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूलथाती को पुनरूज्जीवन दिया। परम वंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार 1991-92 में विज्ञानसम्मत आधार

देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं।

युगनिर्माण योजना व 'युगनिर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणापत्र 1963 में प्रकाशित हुआ।

तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तप-पूत की निवासस्थली बन गया, जहाँ रहकर उन्होंने अपनी शेष तप-साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था। तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों, के द्वारा विचारक्रान्ति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में 1970-71 में पाँच 1008 कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए। मथुरा से स्थायी रूप से विदाई लेते हुए

जून 1971 में एक विराट सम्मेलन में परिजनों को विशेष कार्यभार सौंपकर, परम वंदनीय माता जी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखंड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़ कर स्वंय हिमालय चले गये। एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी 20 वर्ष की क्रियापद्धति बतायी। ऋषि परम्परा बीजारोपण, प्राण - प्रत्यावर्त्तन, संजीवनी व कल्प- साधना सत्र जैसे कार्य उन्होंने शांतिककुंज में सम्पन्न किये।

अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना "ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान" की स्थापना थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे। इस

सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट् परिणाम में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य, प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक। इसके लिए एक विराट ग्रन्थागार व एक सुसज्जित प्रयोगशाला बनी। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी-बूटी, यज्ञविज्ञान तथा मंत्र शक्ति के प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिणाम में किये गये हैं। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया गया कि ध्यान साधना, मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञान सम्मत विद्या है।

गायत्री नगर एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ 9-9 दिन के

साधना सत्र, एक-एक माह के कार्यकर्ता निर्माण हेतु युगशिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे । सुसंस्कारिता व आस्तिकता संवर्धन एवं जन जागृति के केन्द्र, जो 1980 में बनना आरम्भ हुए थे, प्रज्ञा संस्थान, शक्तिपीठ, प्रज्ञामण्डल,स्वाध्याय मंडल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। 80 देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं। 5000 से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर 1984 में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रियाकलापों को समेटने की घोषणा कर दी।

इस बीच कठोर तप साधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा अधिकतर क्रियाकलाप परम वंदनीय माता जी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विद्या को जन-जन को सौंप कर देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उन्होंने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा के अनुसार गायत्री जयन्ती 2 जून 1990 को महाप्रयाण किया। अपनी सारी शक्ति वे परम वंदनीय माता जी को दे गये तथा अपने व माता जी के बीच संघशक्ति की प्रतीक *"लाल मशाल"* को ही इष्ट

आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देव संस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये ।

एक विराट् श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह में जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नवनिर्माण, मनुष्य में देवत्व का उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरुसत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परम वंदनीय माता जी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरंभ किये गये युगसंधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेघ महायज्ञों की

घोषणा की गयी। वातावरण में परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नवनिर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रांति ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया।

स्वयं परम वंदनीय माता जी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर 16 अश्वमेध यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भागद्रपद पूर्णिमा 19 सितम्बर 1994 को महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं।

परम वंदनीय माता जी के महाप्रयाण के बाद दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के

प्रथम अश्वमेघ यज्ञ (नवम्बर 12,1992) से 40वें अश्वमेघ यज्ञ ब्रिसबेन ऑस्ट्रेलिया (अप्रैल 18,2014) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दिखने लगा है।

मुंबई में 2024 में होने वाला अश्वमेध यज्ञ इस कड़ी का सबसे अधुनातन यज्ञ है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक 108 महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु संपन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी।

प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर 1995 में कार्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी गयी है। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य

के वाङ्मय का जो एक सौ आठ खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हुआ। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जायेंगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़-चढकर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। "हम बदलेंगे-युग बदलेंगा" का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी- उज्ज्वल भविष्य, सतयुग, की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है।